शोधामृत
(कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की अंतर्राष्ट्रीय सहकर्मी समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका)

ISSN : 3048-9296 (Online)
3049-2890 (Print)
IIFS Impact Factor-5.375
Vol.-3; issue-3 (July-Sept.) 2026
Page No- 17-21
©2026 Shodhaamrit
DOI : 10.71037/Shodhaamrit.v3i3.04
https://shodhaamrit.gyanvividha.com

Author's :

1. प्रियंका
शोधार्थी, संस्कृत विभाग, हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय, महेन्द्रगढ़.

2. डॉ. देवेन्द्र सिंह राजपूत
सहायकाचार्य, संस्कृत विभाग, हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय, महेन्द्रगढ़.

Corresponding Author :

डॉ. देवेन्द्र सिंह राजपूत
सहायकाचार्य, संस्कृत विभाग, हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय, महेन्द्रगढ़.

अग्निपुराण में विवेचित विविध कलाएं : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

सारांश (Abstract) : अग्निपुराण भारतीय संस्कृति का एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है जिसमें वास्तुकला, मूर्तिकला, नाट्यशास्त्र, काव्यशास्त्र, संगीत, आयुर्वेद और युद्धकला जैसी अनेक कलाओं का विस्तृत वर्णन मिलता है। अठारह महापुराणों में यह कला और विज्ञान से संबंधित ज्ञान का एक समृद्ध स्रोत माना जाता है। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य अग्निपुराण में वर्णित इन विभिन्न कलाओं का सरल, व्यवस्थित और विश्लेषणात्मक अध्ययन करना है। इस शोध में यह स्पष्ट किया गया है कि अग्निपुराण केवल कलाओं के सिद्धान्तों का वर्णन ही नहीं करता, बल्कि उनके व्यावहारिक उपयोग, वैज्ञानिक आधार तथा आध्यात्मिक महत्त्व को भी बताता है। शोध-पत्र में प्रामाणिक श्लोकों के आधार पर वास्तुकला (मन्दिर निर्माण), मूर्तिकला (प्रतिमा निर्माण), चित्रकला, नाट्य एवं काव्यकला तथा धनुर्वेद (युद्धकला) का विस्तार से अध्ययन किया गया है। अग्निपुराण के अनुसार कला केवल मनोरंजन का साधन नहीं है, बल्कि वह मनुष्य को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष जैसे जीवन के चार प्रमुख उद्देश्यों की प्राप्ति में भी सहायता करती है।

संकेत शब्द : अग्निपुराण, ललित कला, वास्तुकला, धनुर्वेद, 64 कलाएं, नाट्यशास्त्र।

प्रस्तावना (Introduction) : भारतीय संस्कृति में पुराण साहित्य केवल धार्मिक आख्यानों का संकलन नहीं है, बल्कि यह तत्कालीन समाज के ज्ञान, विज्ञान, दर्शन और कलाओं का जीवंत दस्तावेज है। अठारह महापुराणों में 'अग्निपुराण' का अपना एक विशिष्ट और अद्वितीय स्थान है। स्वयं महर्षि वेदव्यास ने इस पुराण को 'सर्वविद्याप्रतिष्ठा' अर्थात् सभी विद्याओं का आधार स्तंभ कहा है। ऐतिहासिक और सांस्कृतिक दृष्टि से अग्निपुराण को "विश्वकोश" की संज्ञा दी गई है। इसमें एक ओर जहाँ परा और अपरा विद्याओं का गंभीर दार्शनिक विवेचन है, वहीं दूसरी ओर मानव जीवन को सुंदर, सुगम और कलात्मक बनाने वाली विविध कलाओं का व्यापक व्यावहारिक दर्शन कराया गया है। प्राचीन भारतीय परंपरा में 64 कलाओं की मान्यता रही है। अग्निपुराण इन कलाओं को केवल सौंदर्यशास्त्र के संकुचित दायरे में नहीं बांधता

बल्कि इन्हें जीवन के भौतिक और आध्यात्मिक उन्नति से जोड़ता है। इस शोध-पत्र में अग्निपुराण के विभिन्न अध्यायों में बिखरे कला-विषयक सिद्धांतों को वर्गीकृत कर उनका आलोचनात्मक मूल्यांकन किया गया है। शिक्षित व्यक्ति को केवल शास्त्रों का ज्ञान ही नहीं बल्कि जीवनोपयोगी कलाओं में भी दक्ष होना चाहिए। इन कलाओं के माध्यम से व्यक्ति सौंदर्यबोध, सामाजिक व्यवहार, सृजनात्मकता तथा व्यावहारिक कौशल का विकास करता है। वात्स्यायन की 64 कलाएँ भारतीय शिक्षा-परंपरा में बहुआयामी व्यक्तित्व निर्माण का आदर्श प्रस्तुत करती हैं।

वास्तुकला एवं नगर नियोजन : अग्निपुराण में वास्तुकला, दुर्ग निर्माण, गृह निर्माण और नगर नियोजन का अत्यंत विस्तृत और वैज्ञानिक विवरण मिलता है। भारतीय वास्तुकला को 'वास्तुशास्त्र' के रूप में एक स्वतंत्र कला और विज्ञान माना गया है।

"अभ्यर्च्य वास्तुनगरं प्रकाराढयं तु कारयेत्। (अग्निपुराण 106 -2)

अग्निपुराण के अनुसार नगर का नियोजन इस प्रकार होना चाहिए कि वह सुरक्षित भी हो और सुंदर भी। नगर के चारों ओर चहारदीवारी और खाई का होना आवश्यक है।

भूमि परीक्षण कला : किसी भी निर्माण कार्य से पूर्व भूमि का चयन और उसका परीक्षण करना चाहिए।

"श्वेतारक्ता तथा पीता कृष्णा चैव यथाक्रमम्" ॥

"धृतरक्तान्नमद्यानां गन्धाढया वसतश्च भूः।

मधुरा च कषया च अम्लाद्युपरसा क्रमात्" ॥ (अग्निपुराण 247 - 1/2)

अग्निपुराण में भूमि को ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र श्रेणियों में विभाजित किया गया है। सफेद मिट्टी ब्राह्मण वर्ण के लिए , लाल मिट्टी क्षत्रिय वर्ण के लिए , पीली मिट्टी वैश्य वर्ण के लिए , काली मिट्टी शूद्र वर्ण के लिए उत्तम मानी जाती है। जिस भूमि की मिट्टी से घी जैसी सुगंध आए और स्वाद में वह मीठी हो, वह ब्राह्मणों के निवास या यज्ञ व मंदिर के लिए सर्वोत्तम होती है। जिस मिट्टी से रक्त जैसी गंध आए और स्वाद कसैला हो, वह क्षत्रियों (शौर्य, प्रशासन) के लिए उपयुक्त मानी गई है। जिस भूमि से अन्न की खुशबू आए और स्वाद खट्टा हो, वह वैश्यों (व्यापार, कृषि, गोपालन) के लिए उत्तम मानी जाती है । जिस भूमि से मदिरा जैसी गंध आती हो, वह शूद्र वर्ण के अनुकूल होती है।

नगर एवं दुर्ग नियोजन :

"नगरग्रामदुर्गादौ ग्रहप्रासादवृद्धये ।

एकाशीतिपदै र्वास्तुं पूज्येत्सिद्धये ध्रुवम्" ॥ (अग्निपुराण 105/1)

नगर, ग्राम, दुर्ग किले आदि के नियोजन में घर और मंदिरों की वृद्धि के लिए निश्चित सफलता प्राप्त करने हेतु 81 पदों के द्वारा भू- मंडल (वास्तु मंडल) की पूजा करनी चाहिए।

मूर्तिकला एवं प्रतिमा : मूर्तिकला भारतीय ललित कलाओं में अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रखती है। इसमें देवताओं की मूर्तियों के स्वरूप, उनके आयुध (शस्त्र), और मुद्रा का सटीक वर्णन मिलता है।

शैलजा गन्धजा चैव कौसुमी सप्तधा स्मृता।

कौसुमी गन्धजा चैव मृण्मयी प्रतिमा तथा॥

तत्कालपूजिताच्श्रेताः सर्वकामफलप्रदाः। (अग्निपुराण 43-10/11)

प्रतिमाएँ मुख्यतः सात प्रकार की मानी गई हैं। जिनमें शैलजा (पत्थर से बनी), गन्धजा (सुगंधित पदार्थों जैसे चंदन आदि से बनी), कौसुमी (फूलों से बनी), और मृण्मयी (मिट्टी से बनी), लकडी की, लोहे की, रत्न की, प्रतिमाएँ शामिल हैं। ये तत्काल निर्मित और पूजित होने वाली प्रतिमाएँ अत्यंत श्रेष्ठ होती हैं और् सभी मनोकामनाओं को पूरा करने वाली होती हैं।

नाट्य कला और अभिनय : भरतमुनि के नाट्यशास्त्र की परंपरा को आगे बढ़ाते हुए अग्निपुराण में नाट्यकला के अंगों की विवेचना की गई है।

चतुर्धा सम्भवः सत्त्ववागङ्गाहरणाश्रयः।
स्तम्भादिः सात्त्विको वागारम्भो वाचिक आङ्गिकः।
शरीरारभ आहार्य्यो बुद्धयारम्भप्रवृत्तयः॥ (अग्निपुराण 342 – 1/2)

आंगिक अभिनय- शरीर के अंगों, हस्त-मुद्राओं और नेत्रों के कटाक्ष द्वारा भावों को प्रकट करना आंगिक अभिनय कहलाता है।

वाचिक अभिनय- संवादों का सही उतार-चढ़ाव, स्वर-संगति और शुद्ध उच्चारण वाचिक अभिनय कहलाता है।

आहार्य अभिनय- जिसका आरम्भ बुद्धि से होता है वह आहार्य अभिनय कहलाता है।

सात्त्विक अभिनय- अंतःकरण के वास्तविक भावों जैसे स्तम्भ, स्वेद का स्वाभाविक प्रदर्शन सात्त्विक अभिनय कहलाता है।

काव्य और अलंकार कला : साहित्य सृजन भी 64 कलाओं के अंतर्गत एक उच्च कला है। अग्निपुराण के अनुसार, आभूषणों के बिना जैसे सौंदर्य अधूरा है, वैसे ही अलंकारों के बिना काव्य की कला प्राणहीन है। जिस प्रकार अलंकारों से रहित स्त्री की शोभा नहीं होती, उसी प्रकार अलंकारों से रहित सरस्वती शोभाहीन प्रतीत होती है। इसलिए विद्वान कवि को अनुप्रास, यमक, उपमा, रूपक के कलात्मक प्रयोग से काव्य की रचना करनी चाहिए।

युद्ध कला एवं शस्त्रास्त्र विद्या : प्राचीन भारत में युद्ध केवल पाशविक बल का प्रदर्शन नहीं था, बल्कि वह एक अत्यंत परिष्कृत कला थी, जिसे 'धनुर्वेद' कहा गया है।

विद्विष्टनाशकं सैन्यं सम्भूतान्तः प्रकोपनम्।
शरीरस्फुरणे धन्ये तथा सुस्वप्नदर्शने॥ (अग्निपुराण 228 -4)

जिस समय सेना में शत्रु का विनाश करने के लिये उत्साह जागृत हो और शत्रु राजा के प्रति सेना के मन में क्रोध उत्पन्न हो, विश्राम करते हुए अच्छे सपने दिखाई देते हों, शरीर के शुभ अंग फडकते हों, उस समय सेना को शत्रु देश पर आक्रमण करना चहिए।

निमित्ते शकुने धन्यं जाते शत्रुपरं व्रजेत्।
पदातिनागबहुलां सेना प्रावृषि योजयेत्॥ (अग्निपुराण 228 -5)

जब परिस्थितियां अनुकूल हों और शुभ संकेत मिल रहे हों तभी राजा या सेनापति को शत्रु देश पर चढ़ाई करनी चाहिए। वर्षा ऋतु में कीचड़, और बाढ़ के कारण रथों और घोड़ों की गति धीमी हो जाती है। इसलिए ऐसे समय में पैदल सैनिक और हाथी को प्राथमिकता देनी चहिए ।

युद्ध की मुद्राएं एवं शारीरिक कला : धनुष चलाने या तलवारबाजी के समय शरीर का संतुलन बनाए रखना एक उच्च कोटि की शारीरिक कला है। अग्निपुराण में खडे होने की विभिन्न कलात्मक मुद्राओं का विवरण मिलता हैं। युद्ध कला में विभिन्न शारीरिक गतियों और प्रहारों के नियम हैं। इनमें प्रमुख स्थान निम्नलिखित हैं-

समपाद- दोनों पैरों को सीधा और पास-पास रखकर खड़े होना।

वैशाख- त्रिकोणीय मुद्रा में खड़े होकर दोनों पैरों के बीच थोड़ी दूरी बनाकर धनुष खींचना उपयुक्त होता है।

मण्डल- वृत्ताकार गति करते हुए शत्रु पर प्रहार करना या उसके प्रहार से बचना।

आलीढ और प्रत्यालीढ- एक पैर आगे और एक पैर पीछे करके आक्रमण या रक्षात्मक मुद्रा अपनाना।

व्यावहारिक, वैज्ञानिक एवं उपयोगी कलाएं : ललित कलाओं के अतिरिक्त, अग्निपुराण जीवन के दैनिक और व्यावहारिक पक्षों से जुड़ी कई अन्य उपयोगी कलाओं का भी विस्तृत विवरण प्रदान करता है।

धर्मश्च व्यवहारश्च चरित्रं राजशासनं।
चतुष्पाद् व्यवहाराणामुत्तरः पूर्व साधकः॥ (अग्निपुराण 253 -3)

यदि केवल धर्म से निर्णय स्पष्ट न हो तो व्यवहार का सहारा लिया जाए, व्यवहार से समाधान न मिले तो चरित्र देखा जाए और अंत में आवश्यकता पड़ने पर राजशासन के अनुसार निर्णय किया जाए।

वृक्षायुर्वेद एवं उद्यान कला : पेड़-पौधों को लगाना, उनकी कतरन करना और उन्हें विभिन्न रोगों से बचाकर सुंदर गार्डन तैयार करना प्राचीन भारत की एक प्रिय कला थी। अग्निपुराण में 'वृक्षायुर्वेद' का वर्णन है, जिसमें पौधों के लिए विशेष खाद बनाने की कला और कल्पवृक्ष की तरह उद्यानों को हरा-भरा रखने की विधियां बताई गई हैं।

दक्षिणां दिशमुत्पन्नाः समीपे कण्टकद्रुमाः।
उद्यानं गृहवासे स्यात् तिलान् वाप्यथ पुष्पितान्॥ (अग्निपुराण 282 -2)

घर के दक्षिण दिशा के समीप काँटेदार वृक्ष नहीं होने चाहिए। घर के समीप उद्यान, फुलों वाले वृक्ष तथा तिल आदि शुभ वनस्पतियों का रोपण करना चाहिए। जो कि वातावरण को सुगन्धित एवं सौन्दर्यपूर्ण बनाते हैं,

घृतशीतपयः सेकः फलपुष्पाय सर्वदा।
अविकाजशकृच्चूर्णं यवचूर्णं तिलानि च॥ (अग्निपुराण 282-11)

शीतल दूध अथवा घृत-मिश्रित दुग्ध से वृक्षों का सिंचन तथा भेड़-बकरी की लीद का चूर्ण, जौ का चूर्ण और तिल का उपयोग वृक्षों की वृद्धि एवं उत्पादकता को बढ़ाने में सहायक माना गया है।

गोमांसमुदकच्चैव सप्तरात्रं निधापयेत्।
उत्सेकः सर्ववृक्षाणां फलपुष्पादिवृद्धिदः॥ (282-12)

गोमांस को जल में डालकर सात दिनों तक रखा जाए और उसके बाद उस मिश्रण का वृक्षों की जड़ों में सिंचन किया जाए। ऐसा करने से वृक्षों में फल, पुष्प तथा समग्र वृद्धि में अभिवृद्धि होती है।

रत्न परीक्षा कला : रत्न परीक्षा कला का अर्थ है रत्नों की पहचान करना और उनकी शुद्धता, गुणवत्ता, मूल्य गुण-दोष को समझना। प्राचीन भारत में यह महत्वपूर्ण कला मानी जाती थी। इसका उपयोग केवल आभूषण बनाने तक सीमित नहीं था बल्कि व्यापार, राजकोष, धार्मिक कार्यों और ज्योतिष में भी इसका विशेष महत्व था। भारतीय परंपरा में हीरा, माणिक्य, मोती, पन्ना, नीलम, गोमेद और पुष्पराग जैसे रत्न बहुत मूल्यवान माने जाते थे। इन रत्नों की सही पहचान करना ताकि यह पता चल सके कि रत्न असली है या नकली, उसमें कोई दोष है या नहीं, और उसकी गुणवत्ता कैसी है। अग्निपुराण में रत्नों की पहचान और उनकी परीक्षा का विस्तार से वर्णन मिलता है। इसमें बताया गया है कि रत्नों की जाँच उनके रंग, चमक, आकार, भार, स्वच्छता और पारदर्शिता के आधार पर की जानी चाहिए। साथ ही यह भी कहा गया है कि जिन रत्नों में दरार, धब्बे या अन्य दोष होते हैं वे अच्छे नहीं माने जाते। इसके विपरीत स्वच्छ और दोषरहित रत्न शुभ तथा समृद्धि देने वाले माने गए हैं।

सुवर्णप्रतिबद्धानि रत्नानि श्रीजयादिके।
अंतःप्रभत्वं वैमल्यं सुसंस्थानत्वमेव च॥ (245 -7)

अच्छा रत्न उसकी प्राकृतिक सुंदरता और गुणवत्ता के कारण चमकदार दिखाई देता है। रत्न पूरी तरह साफ और दोषरहित होना चाहिए। उसमें किसी प्रकार का धब्बा या अशुद्धि नहीं होनी चाहिए। जितना अधिक निर्मल रत्न होगा, उतना ही अधिक मूल्यवान माना जाएगा रत्न का आकार संतुलित, सुडौल और आकर्षक होना चाहिए।

पाक कला एवं भेषज निर्माण : भोजन को स्वादिष्ट, सुपाच्य और दीर्घकाल तक सुरक्षित रखने की पाक कला तथा विभिन्न जड़ी-बूटियों के अर्क, आसव और चूर्ण बनाने की भेषज कला का आयुर्वेद के अंतर्गत विस्तार से वर्णन किया गया है।

निष्कर्ष : अग्निपुराण में कला का स्वरुप बहुत व्यापक है। इसमें कला को केवल मनोरंजन या कुछ विशेष लोगों तक सीमित नहीं माना गया है, बल्कि मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र से जोड़ा गया है। भवन निर्माण, मूर्ति निर्माण, चित्रकला, संगीत, नाट्य, काव्य और युद्धकला जैसे सभी कार्यों में कला का महत्त्व बताया गया है। इससे स्पष्ट होता है कि कला का उद्देश्य जीवन को अधिक सुंदर, व्यवस्थित और उपयोगी बनाना है। इसमें मंदिर को केवल

एक भवन नहीं, बल्कि ईश्वर का निवास माना गया है। इसी प्रकार प्रतिमा को केवल पत्थर की आकृति न मानकर श्रद्धा और भक्ति का प्रतीक समझा गया है। नाट्य और संगीत को भी केवल मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि मन की शुद्धि और आध्यात्मिक आनंद प्राप्त करने का माध्यम माना गया है। इस दृष्टि से कला मनुष्य के आध्यात्मिक विकास में सहायक बनती है। अग्निपुराण की एक अन्य महत्त्वपूर्ण विशेषता इसकी वैज्ञानिक दृष्टि है। इसमें मंदिर और प्रतिमा निर्माण के लिए निश्चित माप और अनुपात, भूमि की जाँच की विधियाँ, अस्त्र-शस्त्रों का वर्गीकरण तथा प्राकृतिक रंगों के निर्माण के उपाय बताए गए हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि प्राचीन भारतीय शिल्पकार और आचार्य कला के साथ-साथ विज्ञान और तकनीक का भी गहरा ज्ञान रखते थे। वर्तमान समय में भी अग्निपुराण की शिक्षाएँ अत्यन्त उपयोगी हैं। आज पर्यावरण-अनुकूल भवन निर्माण, प्राकृतिक जीवन-पद्धति और पारम्परिक ज्ञान की ओर लोगों का ध्यान बढ़ रहा है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि अग्निपुराण भारतीय कलाओं का एक अमूल्य भंडार है। इसमें निहित ज्ञान केवल प्राचीन भारत की कला और संस्कृति को समझने में सहायक है। अग्निपुराण का अध्ययन भारतीय कला, संस्कृति और ज्ञान-परम्परा को समझने के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसमें मानव जीवन के अनेक क्षेत्रों से संबंधित उपयोगी और व्यावहारिक ज्ञान का वर्णन मिलता है। प्रस्तुत शोध से यह ज्ञात होता है कि अग्निपुराण में वर्णित कलाएँ केवल मनोरंजन या सौन्दर्य के लिए नहीं हैं, बल्कि वे व्यक्ति के व्यक्तित्व निर्माण, समाज के विकास और राष्ट्र की उन्नति में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

10. संदर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography) :

1. अग्निमहापुराणम् (मूल श्लोक एवं हिंदी अनुवाद) गीताप्रेस, गोरखपुर, उत्तर प्रदेश।
2. अग्रवाल वासुदेवशरण, भारतीय कला, पृथ्वी प्रकाशन, वाराणसी।
3. हजारीप्रसाद द्विवेदी, प्राचीन भारत के कलात्मक विनोद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. उमाकांत मिश्र, भारतीय मूर्तिकला एवं प्रतिमा विज्ञान, कला प्रकाशन, वाराणसी।
5. भरतमुनि का नाट्यशास्त्र, चौखम्बा संस्कृत सीरीज, वाराणसी।
6. वात्स्यायन कामसूत्रम्। चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी।
7. रामशरण शर्मा, प्राचीन भारत का सामाजिक और आर्थिक इतिहास, ओरिएंट ब्लैकस्वान, नई दिल्ली।
8. चरक। चरकसंहिता। चौखम्बा ओरिएण्टालिया, वाराणसी।
9. सुश्रुत। सुश्रुतसंहिता। चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी।
10. Dikshitar V.R. Ramachandra, The Purana Index, University of Madras.
11. Kramrisch Stella**,** The Hindu Temple, University of Calcutta, Calcutta.

•